<u>प्रतिवेद्य</u>

भारतीय सर्वोच्च न्यायालय

आपराधिक अपीलीय अधिकारिता

<u>आपराधिक अपील संख्या - 296/2021</u>

[विशेष अनुमति याचिका (आपराधिक) सं.-6364/2019 से उत्पन्न]

प्रीति सराफ़ एवं अन्य ...अपीलार्थी(गण)

बनाम

रा.रा.क्षे. दिल्ली राज्य एवं अन्य ...प्रत्यर्थी(गण)

<u>निर्णय</u>

<u>न्या. रस्तोगी</u>

1. अनुमति प्रदान की गई |

2. अपीलकर्तागण जो प्राथमिकी संख्या 132/2017 दिनांक 28 अप्रैल, 2017 में वास्तविक शिकायतकर्ता हैं, आपराधिक विविध मामला संख्या 1718/2017 और 7009/2017 में पारित उच्च न्यायालय के दिनांक 15 मार्च, 2019 के आदेश पर सवाल उठा रहे हैं जिसके द्वारा माननीय एकल न्यायाधीश ने दंड प्रक्रिया संहिता (इसके बाद "दं.प्र.सं." के

रूप में संदर्भित) की धारा 482 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए भा.दं.स. की धारा 420, 406 और 34 के तहत अपराध का संज्ञान लेते हुए आदेशों को रद्द कर दिया और द्वितीय प्रत्यर्थी के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही को इस आधार पर रद्द कर दिया कि शिकायत/ प्राथमिकी में लगाए गए आरोप उक्त धाराओं के तहत अपराध नहीं हैं।

<u>मामले के संक्षिप्त तथ्य</u>

3. जैसा कि कथित तौर पर शिकायत से परिलक्षित होता है, मामले का तथ्यात्मक क्रम यह है कि विचाराधीन संपत्ति यानी 37, फ्रेंड्स कॉलोनी (पूर्व), नई दिल्ली द्वितीय प्रत्यर्थी के स्वामित्व में है। उक्त संपत्ति स्टेट बैंक ऑफ पटियाला के पास गिरवी रखी गई थी और बैंक को देय कुल कानूनी देनदारी 18 करोड़ रुपये थी। यह कि उक्त बकाया राशि का भुगतान करने के लिए द्वितीय प्रत्यर्थी ने दलाल अशोक कुमार के साथ साज़िश रची ताकि अपीलार्थीगण/ शिकायतकर्तागण को धोखा देकर ठगा जा सके और सौदे के हिस्से के रूप में शिकायतकर्तागण द्वारा भुगतान की गई

राशि और अधिक गबन करने के लिए, दूसरे प्रत्यर्थी ने जान-बूझकर और झूठे तरीके से अपीलकर्तागण/ शिकायतकर्तागण को यह कहते हुए उनसे विश्वासघात किया कि यदि द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा सौदा पूरा नहीं किया गया तो द्वितीय प्रत्यर्थी शिकायतकर्ता को 25.50 करोड़ रुपये की राशि का भुगतान करेगी । पूरे परिदृश्य को ध्यान में रखते हुए, 24 दिसंबर, 2011 को द्वितीय प्रत्यर्थी और प्रथम अपीलार्थी के बीच एक बिक्री अनुबंध निष्पादित किया गया। द्वितीय प्रत्यर्थी विचाराधीन संपत्ति में से 1205.43 वर्ग गज को 63,28,50,750 रुपये के कुल बिक्री प्रतिफल पर बेचने के लिए सहमत हुई । निष्पादन के समय, प्रथम अपीलकर्ता ने एचडीएफसी बैंक, न्यू फ्रेंड्स कॉलोनी, दिल्ली के दिनांक 24 दिसंबर, 2011 के चेक के माध्यम से 12.50 करोड़ रुपये की राशि का भुगतान किया। उक्त बिक्री अनुबंध के खंड 3 के अनुसार, द्वितीय प्रत्यर्थी को तीन आवश्यकताओं को पूरा करना था जो कि अनिवार्य थीं | प्रथम अपीलार्थी/ शिकायतकर्ता से कोई और राशि प्राप्त करने से पहले

द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा उक्त आवश्यकताओं को 24 मार्च, 2012 तक पूरा किया जाना था।

4. शिकायत में आगे यह आरोप लगाया गया कि बिक्री अनुबंध के खंड 3 के संदर्भ में तीन आवश्यकताओं को द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा पूरा नहीं किया गया और स्वीकृत नक्शा प्राप्त करने में देरी होने के बाद भी, मांग पर प्रथम अपीलार्थी ने 23 मई, 2012 को चेक द्वारा 5.40 करोड़ रुपये का भुगतान किया और अपनी नेकनीयती दिखाने के लिए द्वितीय प्रत्यर्थी ने 24 दिसंबर 2011 के अनुबंध के पालन के लिए ज़मानत के रूप में 25.50 करोड़ रुपये के बाद की तारीख के चेक सौंपे। प्रथम अपीलकर्ता/शिकायतकर्ता से राशि प्राप्त होने के बाद, द्वितीय प्रत्यर्थी ने तुरंत स्टेट बैंक ऑफ पटियाला की अपनी बकाया कानूनी देनदारी का भुगतान करके बैंक से अनापत्ति प्रमाणपत्र प्राप्त कर लिया लेकिन अनापत्ति प्रमाणपत्र प्राप्ति के तथ्य को द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा शिकायतकर्ता को जानबूझकर कभी नहीं बताया गया। द्वितीय प्रत्यर्थी ने इस तथ्य से पहली बार

उस समय पर्दा उठाया जब शिकायतकर्ता को ज़मानत के रूप में सौंपे गए 25.50 करोड़ रुपये के बाद की तारीख के चेक अमान्य हो गए।

5. शुरू से ही द्वितीय प्रत्यर्थी शिकायतकर्तागण/अपीलार्थीगण को धोखा देने का इरादा इस तथ्य से साफ़ हो जाता है कि द्वितीय प्रत्यर्थी को 24 मार्च, 2012 को या उससे पहले अनिवार्य आवश्यकता को पूरा करना था लेकिन पहली दो आवश्यकताएं क्रमशः 11 मई, 2012 और 2 जून, 2012 को पूरी की गईं और तीसरी आवश्यकता अभी भी पूरी नहीं हुई। इस स्तर पर, केवल प्रथम अपीलकर्ता/ शिकायतकर्ता को धोखा देने के लिए, द्वितीय प्रत्यर्थी ने 30 जनवरी, 2013 को संवाद के माध्यम से बिक्री अनुबंध को ग़ैर-कानूनी ढंग से समाप्त कर दिया। प्रथम अपीलकर्ता ने मामले को निपटाने के लिए अपने स्तर पर पूरी कोशिश की थी, लेकिन द्वितीय प्रत्यर्थी की कार्य-प्रणाली बिक्री अनुबंध के निष्पादन के समय से ही धोखा देने की थी, इसलिए कुछ भी नहीं हुआ।

6. इस संबंध में, साकेत न्यायालय, दिल्ली के समक्ष द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा किए गए अपराध का संज्ञान लेने के लिए 23 सितंबर, 2015 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 200 सहपठित धारा 190 के तहत माननीय दंडाधिकारी के समक्ष एक निजी शिकायत दर्ज की गई जिसमें संबंधित पुलिस स्टेशन को 15 नवंबर, 2016 के आदेश के ज़रिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के तहत प्राथमिकी दर्ज करने का निर्देश दिया गया था, जिसे द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा आपराधिक पुनरीक्षण (याचिका) दायर करके चुनौती दी गई थी, लेकिन इसे अति.सत्र न्या. एवं विशेष न्यायाधीश (एनडीपीएस), दक्षिण पूर्व, साकेत न्यायालय, नई दिल्ली के दिनांक 26 अप्रैल, 2017 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया और उसके बाद 28 अप्रैल, 2017 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के तहत द्वितीय प्रत्यर्थी और दलाल श्री अशोक कुमार के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 420, 406 और 34 के तहत प्राथमिकी दर्ज की गई।

7. जांच अधिकारी ने जांच करके भारतीय दंड संहिता की धारा 420, 406 और 34 के तहत आरोप पत्र दिनांकित 5 अक्टूबर, 2018 दायर किया। आरोप पत्र से पता चलता है कि प्रश्नगत संपत्ति, यानी 1205.43 वर्ग गज को उप-विभाजित किए जाने का आरोप है जबकि संपत्ति, यानी प्लॉट नंबर 37 का माप 3930 वर्ग गज है और मास्टर प्लान दिल्ली, 2021 के खंड 4.4.3 (IV) के अनुसार प्लॉट के उप-विभाजन को स्वीकृति दिए जाने की अनुमति नहीं है। आरोप पत्र से यह भी पता चलता है कि 24 दिसंबर, 2011 को बिक्री अनुबंध के अनुसार निष्पादित वर्तमान लेनदेन से पहले, उसी कार्य-प्रणाली के तहत द्वितीय प्रत्यर्थी ने पहले वर्ष 2007 में स्व-समान संपत्ति के संदर्भ में मैसर्स शाइनस्टार बिल्डकॉन प्राइवेट लिमिटेड से 18 करोड़ रुपये की राशि ज़ब्त कर ली थी | इससे यह भी पता चलता है कि द्वितीय प्रत्यर्थी ने न तो अपीलार्थीगण के लिए साइट के नक्शे को मंजूरी दिलवाई और न ही उसके दुर्भावनापूर्ण इरादों के कारण जान-बूझकर विभाजित और सीमांकित क्षेत्र

को। संदिग्ध के रूप में द्वितीय प्रत्यर्थी के पति की भूमिका दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत लंबित जांच के अधीन है और यदि प्रतिकूल सामग्री अभिलेख पर आती है, तो बाद में एस.सी. गोयल (द्वितीय प्रत्यर्थी के पति) के खिलाफ पूरक आरोप पत्र दायर किया जा सकता है।

8. द्वितीय प्रत्यर्थी ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष उसके कहने पर दायर पुनरीक्षण याचिका में 15 नवंबर, 2016 और 26 अप्रैल, 2017 के आदेशों को चुनौती दी।

9. अभिलेख से पता चलता है कि इस तथ्य को उच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीश के संज्ञान में लाए जाने के बाद कि आरोप पत्र दाखिल किया जा चुका है, माननीय न्यायाधीश ने लोक अभियोजक को आदेश दिनांक 9 अक्टूबर, 2018 द्वारा आरोप पत्र को अभिलेख पर लाने का निर्देश दिया। लोक अभियोजक द्वारा न्यायालय के आदेश के अनुपालन में आरोप पत्र दाखिल करने के बाद भी, उच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीश ने तथ्यों पर ध्यान

देते समय केवल 24 दिसंबर, 2011 के बिक्री अनुबंध तथा 30 जनवरी, 2013 के समाप्ति नोटिस पर ध्यान दिया और अभिलेख पर मौजूद स्पष्ट तथ्यों की जांच किए बिना, शिकायत में और जाँच के दौरान जो कुछ भी हुआ वो विचारण न्यायलय के समक्ष दायर आरोप-पत्र से परिलक्षित हुआ और जो अभिलेख का हिस्सा था, उसी आधार पर अभी भी कार्यवाही चली और टिप्पणी की कि मामला अनुबंध के साधारण उल्लंघन का है, जो विशुद्ध रूप से दीवानी विवाद को जन्म देता है और इसे फौजदारी अपराध में परिवर्तित नहीं किया जा सकता है, विशेष रूप से जब मध्यस्थता की कार्यवाही शुरू हो चुकी हो, ऐसी विशेष परिस्थितियों में, यह माना गया कि यदि इस तरह के दीवानी विवादों को आपराधिक कार्यवाही में मुकद्दमा चलाने की अनुमति दी जाती है, तो माननीय न्यायाधीश के अनुसार, यह न्यायालय की प्रक्रिया का सरासर दुरूपयोग होगा। इसके परिणाम-स्वरूप, दिनांक 15 नवंबर, 2016 और 24 अप्रैल, 2017 को चुनौती देने वाली सभी आपराधिक कार्यवाहियों और आदेशों

को रद्द कर दिया और यह भी टिप्पणी की कि 15 मार्च, 2019 के आक्षेपित निर्णय द्वारा मध्यस्थता की कार्यवाही में की गई टिप्पणियों को गुणागुण के आधार की अभिव्यक्ति नहीं माना जाएगा।

10. हम अपीलार्थीगण के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मुकुल रोहतगी, द्वितीय प्रत्यर्थी के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पी. चिदम्बरम और राज्य की अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल सुश्री ऐश्वर्या भाटी को सुन चुके हैं।

11. अपीलार्थीगण के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मुकुल रोहतगी ने कहा कि 5 अक्टूबर, 2018 को जांच अधिकारी द्वारा दायर आरोप-पत्र से पता चलता है कि द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 406, 420 और 34 के तहत अपराध किया गया है तथा उच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीश के दिनांक 9 अक्टूबर, 2018 के आदेश के अनुसार आरोप पत्र की प्रति अभिलेख पर प्रस्तुत की गई, फिर भी आपराधिक कार्यवाही को रद्द करते हुए माननीय

न्यायाधीश द्वारा आक्षेपित निर्णय में आरोप-पत्र को संदर्भित नहीं किया गया।

12. विद्वान अधिवक्ता ने यह भी कहा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग एक अपवाद है। शिकायत/ प्राथमिकी/आरोप-पत्र की जांच शुरू करने से पहले उच्च न्यायालय द्वारा बहुत सावधानी बरती जानी चाहिए ताकि यह तय किया जा सके कि क्या अभियोजन को शुरुआत में ही विफल करने के लिए विरलों में विरलतम मामला बनता है| उच्च न्यायालय से यह अपेक्षा की गई थी कि प्रथम दृष्टया शिकायत, आरोप-पत्र और उसके समर्थन में जाँच अधिकारी द्वारा दर्ज गवाह के बयान पर इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए विचार करे कि क्या न्यायालय उस सबूत पर अपराध का संज्ञान ले सकता है और मुक़द्दमे को आगे बढ़ा सकता है। यदि यह इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि कोई संज्ञेय अपराध नहीं बनता है, तो प्राथमिकी/आरोप-पत्र को रद्द करने के अलावा और कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती

है। लेकिन केवल अपवादात्मक मामलों में, जैसे कि दुर्भावना के विरलों में विरलतम मामलों में, निजी प्रतिशोध प्रक्रिया को समाप्त करने के लिए कार्यवाही शुरू करने का लाभ शिकायत करने में लिया जाता है या प्राथमिकी से स्वयं किसी संज्ञेय अपराध का पता नहीं चलता है।

13. विद्वान अधिवक्ता का निवेदन है कि उच्च न्यायालय ने अभिलेख पर मौजूद महत्वपूर्ण तथ्यों की अनदेखी कर स्पष्ट गलती की है जो आदेश को संवेदनात्मक रूप से संवेदनशील बनाते हैं और आगे यह निवेदन किया कि माननीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने तथ्यों के सभी पहलुओं पर विचार किया था और उचित राय दी कि संज्ञान लेने वाला आदेश त्रुटिपूर्ण नहीं हो सकता लेकिन उच्च न्यायालय ने अपने निष्कर्ष में पूरी तरह से गलती की है और अभिलेख पर उपलब्ध स्पष्ट तथ्यों पर भी ध्यान नहीं दिया और इस आधार पर आगे बढ़ा कि ऐसे मामले में जहां बिक्री अनुबंध है और इसके कथित उल्लंघन के कारण यह बाद में समाप्त हो गया है, तो ऐसे विवाद दीवानी विवाद हैं

और विशेष रूप से जहां मध्यस्थता की कार्यवाही लंबित हो, उनमें आपराधिक कार्यवाही, न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगी, इन विशेष परिस्थितियों में, माननीय न्यायाधीश द्वारा जो आधार बनाया गया है, वह कानून में स्थिर नहीं है और इसलिए आदेश को रद्द किया जाना चाहिए।

14. अपनी दलीलों के समर्थन में, विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय द्वारा **आर.पी. कपूर बनाम पंजाब राज्य; हरियाणा राज्य एवं अन्य बनाम भजन लाल एवं अन्य; ट्रिसन केमिकल इंडस्ट्री बनाम राजेश अग्रवाल और अन्य; एम कृष्णन बनाम विजय सिंह और अन्य; जोसेफ़ साल्वराज ए बनाम गुजरात राज्य और अन्य; अरुण भंडारी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य; आनंद कुमार मोहट्टा और अन्य बनाम राज्य (रा.रा.क्षे. दिल्ली), गृह विभाग और अन्य** में दिए गए निर्णयों पर भरोसा जताया है।

15. वहीँ दूसरी ओर द्वितीय प्रत्यर्थी के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पी. चिदंबरम ने निवेदन किया कि दिनांक 24

दिसंबर, 2011 का बिक्री अनुबंध संपत्ति के स्वामित्व, स्टेट बैंक ऑफ पटियाला के पास संपत्ति के गिरवी होने और भुगतान के बाद, बैंक से मूल कागजात और अनापत्ति प्रमाण पत्र प्राप्त करने के बाद संपत्ति को छुड़ाने, उसके बाद 24 दिसंबर, 2011 बिक्री अनुबंध के नियमों और शर्तों के अनुसार पक्षकारों द्वारा आगे की प्रक्रिया को अंजाम दिए जाने के बारे में सभी तथ्यों का खुलासा करता है| जब अपीलकर्ता बिक्री अनुबंध के नियमों और शर्तों के अनुपालन में अपने दायित्व को पूरा करने में विफल रहा, तो बिक्री अनुबंध को 30 जनवरी, 2013 के पत्र द्वारा समाप्त कर दिया गया और इसने द्वितीय प्रत्यर्थी को अनुबंध की शर्तों के तहत जमा की गई बयाना राशि को जब्त करने का अधिकार दिया और यह पूरी तरह से एक दीवानी विवाद था और मध्यस्थता की शर्त होने के कारण, प्रथम अपीलकर्ता के कहने पर मध्यस्थता की कार्यवाही शुरू की गई और न्यायालय में कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान भी, विद्वान मध्यस्थ ने 8 मई, 2020 को एक निर्णय पारित

किया है जिसे द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत चुनौती दी गई है, जो दिल्ली उच्च न्यायालय में लंबित है।

16. विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि पक्षकारों ने बिक्री अनुबंध किया है जो भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के तहत अपराध नहीं है। न तो शिकायत जो शुरू में अपीलार्थीगण के कहने पर दर्ज की गई थी और न ही दिनांक 5 अक्टूबर, 2018 का आरोप पत्र, जो बाद में दायर किया गया था, हालांकि जिस पर उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित फैसले में किसी तरह से ध्यान नहीं गया, में भी कहीं पर भी द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा प्रथम दृष्टया भा.दं.सं. की धारा 420, 406 व 34 के तहत फौजदारी अपराध का मामला नहीं बनता है और यदि पक्षकारों ने बिक्री अनुबंध किया है जो पूरी तरह से एक वाणिज्यिक लेनदेन है, और अगर बिक्री अनुबंध की शर्तों का उल्लंघन हुआ है, तो परिणामस्वरूप समझौता करने वाले पक्ष का बयाना राशि जब्त करना न्यायोचित था | यह केवल एक दीवानी विवाद

है। चूंकि जब्त की गई राशि को वापस करने की मांग की गई थी, जिसके न करने पर आपराधिक कार्यवाही का रंग देते हुए हिसाब चुकता करने के लिए आपराधिक विधि लगाने हेतु प्राथमिकी दर्ज की गई जो अस्वीकार्य है और जिसे अभिलेख पर पेश तथ्यात्मक क्रम द्वारा समर्थित आक्षेपित निर्णय में उच्च न्यायालय द्वारा माना गया है।

17. विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि वर्तमान मामला दीवानी विवाद का है क्योंकि द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा बयाना राशि जब्त कर ली गई थी जब प्रथम अपीलार्थी दिनांक 24 दिसंबर, 2011 के बिक्री अनुबंध के नियमों और शर्तों को पूरा करने और निभाने के लिए तैयार नहीं था। और मध्यस्थता की कार्यवाही शुरू होने के बाद, भारतीय दंड संहिता की धारा 420, 406 और 34 के तहत आपराधिक आरोप के साथ प्रत्यर्थी को परेशान करने के लिए आपराधिक कार्यवाही शुरू की गई थी और आगे निवेदन किया कि धारा 406 के तहत कोई अपराध नहीं बनता क्योंकि बयाना राशि का भुगतान अनुबंध के अनुसार किया गया था और अनुबंध

में कोई प्रतिबंध नहीं था कि इस धन का उपयोग कैसे किया जाना है, इसलिए कोई गबन नहीं हुआ है।

18. विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि अपीलार्थी निर्दोष नहीं है और उसने इस तथ्य को दबा दिया है कि उसे द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा भेजा गया दिनांक 28 फरवरी, 2012 का पत्र प्राप्त नहीं हुआ। इसके विपरीत, पर्याप्त दस्तावेजी साक्ष्य हैं, साथ ही प्रथम अपीलकर्ता द्वारा इस बात पर उसकी स्वीकृति भी है, जो यह दर्शाती है कि उसे उक्त पत्र प्राप्त हुआ था। चूंकि उसने 28 दिसंबर, 2012 के पत्र का जवाब नहीं दिया, इसलिए यह समझा गया कि वह अनुबंध के संदर्भ में अपने दायित्वों को निभाने के लिए तैयार नहीं थी और परिणामस्वरूप, द्वितीय प्रत्यर्थी 30 जनवरी, 2013 के पत्र द्वारा अनुबंध को समाप्त करने के अपने अधिकारों के दायरे में थी |

19. विद्वान अधिवक्ता ने आगे यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि अपीलार्थी द्वारा अंकित करार के खण्ड 3 की सभी तीन शर्तों को पूरा किया गया था और जवाबी

हलफनामे में इसके समर्थन में दस्तावेजी साक्ष्य अभिलेख पर रखे गए हैं।

20. द्वितीय प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों पर भी भरोसा जताया है जो बुनियादी सिद्धांतों को निर्धारित करते हैं, जिसके तहत दं.प्र.सं. की धारा 482 के तहत निहित शक्तियों का उच्च न्यायालय द्वारा प्रयोग किया जाना है और जिनमें आपराधिक कार्यवाही को यह टिप्पणी करते हुए रद्द कर दिया है कि जब दीवानी विवाद हो, तो आपराधिक कार्यवाही शुरू करना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा और **राजाभाई अब्दुल रहमान मुंशी बनाम वासुदेव धनजीभाई मोदी; एलआर द्वारा जी नारायणस्वामी रेड्डी (मृत) और एक अन्य बनाम कर्नाटक सरकार और एक अन्य; जी सागर सूरी और एक अन्य बनाम उ.प्र. राज्य और अन्य; मुरारी लाल गुप्ता बनाम गोपी सिंह; इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन बनाम एनईपीसी इंडिया लिमिटेड और अन्य; हरमनप्रीत सिंह अहलुवालिया और अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य;**

<u>जोसेफ साल्वराज ए बनाम गुजरात राज्य और अन्य; चंद्रन रत्नास्वामी बनाम के.सी. पलानीसामी और अन्य; वीईएसए होल्डिंग्स प्राइवेट लिमिटेड और एक अन्य बनाम केरल राज्य और अन्य; के सुब्बा राव और अन्य बनाम तेलंगाना राज्य द्वारा सचिव, गृह विभाग और अन्य</u> के फैसलों पर भरोसा किया।

21. विद्वान अधिवक्ता ने अपने लिखित निवेदन में आगे कहा है कि उच्च न्यायालय ने वास्तव में उस आरोप-पत्र का उल्लेख नहीं किया है जिसका संदर्भ दिया गया है, यह न्यायालय यदि उचित समझे तो इन तथ्यों और परिस्थितियों में मामले को नए सिरे से विचार के लिए उच्च न्यायालय को वापस भेज सकता है| यह अन्यायपूर्ण होगा यदि द्वितीय प्रत्यर्थी को इस आधार पर आपराधिक अभियोजन का सामना करने के लिए मजबूर किया जाए कि उच्च न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों पर ध्यान नहीं दिया ।

22. प्रस्तुतियाँ समाप्त होने के बाद, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 340 सहपठित धारा 195 के तहत कार्यवाही शुरू करने के लिए द्वितीय प्रत्यर्थी के कहने पर एक अंतरवर्ती आवेदन दायर किया गया है। जिसमें यह आरोप लगाया गया है कि अपीलार्थीगण ने न केवल दस्तावेजों को छुपाया है बल्कि गलत बयान दिया है और यह प्रार्थना की गई है कि अपीलार्थीगण के खिलाफ दं.प्र.सं. की धारा 340 के तहत कार्यवाही की जाए।

23. यह विधि का सुस्थापित सिद्धांत है कि दं.प्र.सं. की धारा 482 के तहत शक्तियों का प्रयोग करने के लिए, शिकायत की संपूर्णता में शिकायत/प्राथमिकी/आरोप-पत्र में लगाए गए आरोप के आधार पर जांच की जानी चाहिए और उस स्तर पर उच्च न्यायालय मामले में जाने या इसकी सत्यता की जांच करने के लिए बाध्य नहीं था। शिकायत/प्राथमिकी/आरोप-पत्र में जो कुछ भी सामने आता है, उस पर बिना किसी गंभीर जांच के विचार किया जाएगा। शिकायत/प्राथमिकी/आरोप-पत्र और अभिलेख पर अन्य

दस्तावेजी साक्ष्य, यदि कोई हो, पर पूर्व दृष्टया अपराध प्रकट होना चाहिए।

24. जो प्रश्न विचार के लिए उठाया जाता है, वह यह है कि किन परिस्थितियों और मामलों की श्रेणियों में, आपराधिक कार्यवाही को संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय की असाधारण शक्तियों का प्रयोग करके या दं.प्र.सं. की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों के प्रयोग करके रद्द किया जा सकता है| इस न्यायालय और विभिन्न उच्च न्यायालयों के समक्ष अक्सर इस पर गंभीर रूप से बहस होती रही है। हालांकि कई फैसलों में, इस प्रश्न का उत्तर इस न्यायालय द्वारा कई मौकों पर दिया जा चुका है, फिर भी यह अब भी विचार के लिए आता है और इस पर गंभीरता से बहस होती है।

25. इस पृष्ठभूमि में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय के निहित अधिकार क्षेत्र के दायरे की जांच **<u>हरियाणा राज्य और अन्य बनाम भजन लाल और</u>**

<u>अन्य (उपरोक्त)</u> में इस न्यायालय के फैसले में की गई है।

प्रासंगिक पैराग्राफ का उल्लेख यहां किया गया है: -

> "**102**. अध्याय XIV के तहत संहिता के विभिन्न प्रासंगिक प्रावधानों और अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण शक्ति के प्रयोग से संबंधित बहुत सारे निर्णयों में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित कानून के सिद्धांत या हमारे द्वारा ऊपर सार में पुन: प्रस्तुत की गई संहिता की धारा 482 के तहत निहित शक्तियों की व्याख्या की पृष्ठभूमि में, उदाहरण के तौर पर हम मामलों की निम्नलिखित श्रेणियां देते हैं जिनमें ऐसी शक्ति का प्रयोग या तो किसी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने अथवा अन्यथा न्याय का लक्ष्य प्राप्त करने लिए किया जा सकता है, हालांकि कोई सटीक, सुपरिभाषित, पर्याप्त रूप से चैनलाइज्ड और गैर-लचीले दिशा-निर्देश या ठोस फार्मूला निर्धारित करना और असंख्य प्रकार के मामलों की विस्तृत सूची देना संभव नहीं हो सकता है, जिसमें ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए।
>
> (1) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट या शिकायत में लगाए गए आरोप, भले ही उन्हें सही मानकर संपूर्ण रूप से स्वीकार किया गया हो, से प्रथम दृष्टया कोई अपराध नहीं बनता है, आरोपी के खिलाफ मामला नहीं बनता है।
>
> (2) जहां प्राथमिकी में आरोप और प्राथमिकी के साथ संलग्न अन्य तथ्य, यदि हो, से संज्ञेय अपराध का इन्केशाफ नहीं होता हो, जो पुलिस अधिकारियों द्वारा संहिता की धारा 155(2) के दायरे में दंडाधिकारी के आदेश के अलावा संहिता

की धारा 156(1) के तहत जांच को न्यायोचित ठहराए।

(3) जहां प्राथमिकी या शिकायत में किए गए अविवादित आरोप और उसके समर्थन में एकत्र किए गए सबूत किसी भी अपराध के घटित होने का इन्केशाफ नहीं करते हैं और आरोपी के खिलाफ मामला नहीं बनता।

(4) जहां, प्राथमिकी में आरोप संज्ञेय अपराध न हों, बल्कि केवल असंज्ञेय अपराध हो, तो पुलिस अधिकारी द्वारा मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना किसी भी जांच की अनुमति नहीं है जैसा कि संहिता की धारा 155(2) के तहत विचार किया गया है।

(5) जहां प्राथमिकी या शिकायत में लगाए गए आरोप इतने बेतुके और स्वाभाविक रूप से असंभव हों कि जिसके आधार पर कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति कभी भी इस न्यायसंगत निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता कि आरोपी के खिलाफ कार्रवाई के लिए पर्याप्त आधार है।

(6) जहां कार्रवाई प्रारंभ करने और जारी रखने के लिए संहिता या संबंधित अधिनियम (जिसके तहत आपराधिक कार्यवाही की जाती है) के किसी भी प्रावधान में स्पष्ट कानूनी प्रतिबंध लगाया गया हो और/या जहां संहिता या संबंधित अधिनियम में कोई विशिष्ट प्रावधान है, जो पीड़ित पक्ष की शिकायत का प्रभावी समाधान प्रदान करता हो।

(7) जहां आपराधिक कार्यवाही में स्पष्ट रूप से दुर्भावना हो और/या जहां कार्यवाही दुर्भावनापूर्ण रूप से आरोपी से प्रतिशोध लेने के लिए और निजी और व्यक्तिगत रंजिश के कारण उसे प्रताड़ित करने के उद्देश्य से शुरू की गई है।"

26. इस न्यायालय ने दं.प्र.सं. की धारा 482 के तहत निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालयों द्वारा ध्यान में रखे जाने वाले दिशानिर्देशों को निर्धारित करने में व्यापक रूपरेखा और मापदंडों को स्पष्ट किया है। इस न्यायालय द्वारा निर्धारित पूर्वोक्त सिद्धांत उदाहरण हैं और संपूर्ण नहीं हैं।` फिर भी, यह उन परिस्थितियों और स्थिति पर प्रकाश डालते हैं जिन्हें ध्यान में रखा जाना चाहिए जब उच्च न्यायालय दं.प्र.सं. की धारा 482 के तहत अपनी अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करता है।

27. इस न्यायालय द्वारा हाल ही में **<u>अर्नब मनोरंजन गोस्वामी बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य</u>** में इसे और स्पष्ट किया गया है, जहां भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 और दं.प्र.सं. की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का काफी विस्तार से विश्लेषण किया गया है।

28. इस प्रकार यह सुस्थापित है कि उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग एक असाधारण शक्ति है जिसे

शिकायत/प्राथमिकी/आरोप-पत्र की जांच शुरू करने से पहले यह तय करने के लिए कि क्या मामला विरलों में से विरलतम मामला है, अभियोजन को इसकी शुरुआत में विफल करने के लिए बहुत सावधानी के साथ प्रयोग किया जाना चाहिए।

29. विचाराधीन मामले में, यदि हम उन दिशा-निर्देशों का विश्लेषण करने का प्रयास करते हैं जिनका संदर्भ दिया गया है, तो क्या यह कहा जा सकता है कि शिकायत/ प्राथमिकी/ आरोप पत्र में आरोप द्वितीय प्रत्यर्थी के खिलाफ मामला नहीं बनाते हैं या वे खुलासा करते हैं कि द्वितीय प्रत्यर्थी के खिलाफ आरोपित अपराध की सामग्री या आरोप स्पष्ट रूप से बेतुके और स्वाभाविक रूप से असंभव हैं ताकि कोई भी विवेकपूर्ण व्यक्ति कभी भी इस निष्कर्ष पर न पहुंच सके कि द्वितीय प्रत्यर्थी के खिलाफ कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है।

30. वर्तमान मामले में, शिकायत/प्राथमिकी/आरोप-पत्र, जैसा कि ऊपर देखा गया है, पूछे गए प्रश्नों को

विश्वसनीयता प्रदान करता है। यह तय है कि किसी को इस कारण को महत्व नहीं देना चाहिए, या यह प्रस्तुत करने का इरादा नहीं करना चाहिए कि शिकायत में आरोपों को पहली नज़र में स्वीकार करना होगा और जिसकी सच्चाई या झूठ की जाँच इस स्तर पर न्यायालय द्वारा नहीं की जाएगी, जैसा कि ऊपर देखा गया है| शिकायत में आरोप सही थे या नहीं, यह परीक्षण के चरण में दिए गए सबूतों के आधार पर तय किया जाना है और **नागपुर स्टील एंड अलॉयज प्राइवेट लिमिटेड बनाम पी राधाकृष्ण और अन्य** के मामले में इस कारण से संबंधित टिप्पणियों पर ध्यान दिया जाना चाहिए। पैरा 3 में, इस न्यायालय ने टिप्पणी की:-

> "हमने शिकायत का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया है। हमारी राय में यह नहीं कहा जा सकता है कि शिकायत में किसी अपराध के कारित होने का खुलासा नहीं किया गया है। केवल इसलिए कि अपराध एक वाणिज्यिक लेन-देन के दौरान किया गया था, यह मानने के लिए पर्याप्त नहीं होगा कि शिकायत पर मुकद्दमा चलाए जाने की आवश्यकता नहीं है। शिकायत में आरोप सही थे या नहीं, इसका फैसला शिकायत मामले में सुनवाई के दौरान पेश किए जाने वाले सबूतों के आधार पर किया जाना था। यह निश्चित रूप से ऐसा मामला

नहीं था जिसमें आपराधिक मुकद्दमे को संक्षिप्त किया जाना चाहिए था। शिकायत को रद्द करने के परिणामस्वरूप घोर अन्याय हुआ है। इसलिए, हम मामले के गुणागुण पर कोई राय व्यक्त किए बिना, इस अपील की अनुमति देते हैं और उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश को अपास्त करते हुए शिकायत को बहाल करते हैं। माननीय विचारण दंडाधिकारी शिकायत पर कार्यवाही आगे बढ़ाएंगे और विधि अनुसार उसका शीघ्रता से निपटान करेंगे।"

31. यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि उच्च न्यायालय द्वारा निहित शक्ति के प्रयोग के मामले में, केवल यह देखने की आवश्यकता है कि क्या कार्यवाही जारी रखना न्यायालय की प्रक्रिया का सम्पूर्ण दुरुपयोग होगा। दंड प्रक्रिया संहिता में जांच, आरोप तय करने और विचारण की विस्तृत प्रक्रिया शामिल है और उस स्थिति में जब उच्च न्यायालय कानून की ज्ञात प्रक्रिया को रोकना चाहता है, तो उसे अपने निहित अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए शिकायत/प्राथमिकी/आरोप पत्र में हस्तक्षेप करने के लिए बहुत सावधानी के साथ उचित समझदारी का उपयोग करना चाहिए।

32. वर्तमान मामले में, शिकायत/प्राथमिकी/आरोप-पत्र को ध्यान से पढ़ने पर, हमारे विचार से, यह नहीं कहा जा सकता है कि शिकायत किसी अपराध के होने का खुलासा नहीं करती है। शिकायत/प्राथमिकी/आरोप-पत्र में आरोपों के आधार पर भा.दं.सं. की धारा 406 और 420 के तहत अपराधों के अवयवों को अनुपस्थित नहीं कहा जा सकता है। हम यह जोड़ना चाहेंगे कि क्या शिकायत में लगाए गए आरोप अन्यथा सही हैं या नहीं, इसका निर्णय विचारण के दौरान पेश किए जाने वाले साक्ष्यों के आधार पर होना था | केवल इसलिए कि अनुबंध के उल्लंघन के लिए एक उपाय उपलब्ध है या अपीलकर्ताओं के कहने पर मध्यस्थता की कार्यवाही शुरू की गई थी, यह न्यायालय को इस निष्कर्ष पर आने के लिए प्रेरित नहीं करता है कि दीवानी उपचार ही एकमात्र उपाय था और किसी भी तरह से आपराधिक कार्यवाही शुरू करना, ऐसी कार्यवाही को रद्द करने के लिए दं.प्र.सं. की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय की

अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करने के लिए न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा।

33. हमने पक्षकारों की दलीलों, शिकायत/प्राथमिकी/आरोप-पत्र और निचले न्यायालयों के आदेशों का अध्ययन किया है और अभिलेख पर मौजूद तथ्यों को ध्यान में रखा है। पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद, हम संतुष्ट हैं कि विचाराधीन मामले में शामिल मामला ऐसा मामला नहीं है जिसमें आपराधिक मुकद्दमे को टाला जाना चाहिए था। अपने अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने में उच्च न्यायालय न्यायोचित नहीं था। उच्च न्यायालय ने मुख्य रूप से दो परिस्थितियों पर ध्यान दिया है (i) कि यह अनुबंध के कथित उल्लंघन के कारण बिक्री अनुबंध को समाप्त करने का मामला था और (ii) यह तथ्य कि अपीलकर्ताओं के कहने पर मध्यस्थता की कार्यवाही शुरू की गई है। हमारे विचार से, उच्च न्यायालय द्वारा देखी गई दोनों कथित परिस्थितियां कानून की दृष्टि से स्थिर नहीं हैं। वर्तमान

शिकायत/प्राथमिकी/आरोप-पत्र में वर्णित तथ्य वास्तव में वाणिज्यिक लेनदेन को दर्शाते हैं, लेकिन शायद ही यह मानने का एक कारण है कि इस तरह के लेनदेन से धोखाधड़ी का अपराध नहीं होगा। वास्तव में, कई बार, वाणिज्यिक लेनदेन के दौरान धोखाधड़ी का अपराध किया जाता है और भा.दं.सं. की धारा 415, 418 और 420 के तहत दृष्टांत निर्धारित किए गए हैं। इस न्यायालय द्वारा **ट्रिसन्स केमिकल इंडस्ट्री बनाम राजेश अग्रवाल और अन्य (सुप्रा)** में भी इसी तरह की टिप्पणियां की गई हैं: -

> "9. हम इस तर्क की सराहना करने में असमर्थ हैं कि विवादों के मध्यस्थता को संदर्भित करने के लिए अनुबंध में शामिल प्रावधान आपराधिक अभियोजन के लिए एक प्रभावी विकल्प है जब विवादित कार्य एक अपराध हो| मध्यस्थता अनुबंध के उल्लंघन से प्रभावित पक्ष को राहत प्रदान करने का एक उपाय है, लेकिन मध्यस्थ किसी भी कार्य का परीक्षण नहीं कर सकता है, जो एक अपराध के बराबर है, हालांकि वही कार्य अनुबंध के तहत किसी भी कार्य के निर्वहन से जुड़ा हो सकता है। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा शिकायत को दहलीज पर ही खारिज करने के लिए वे अच्छे कारण नहीं हैं। जांच एजेंसी को आरोपों के पूरे दायरे में जाने और अपने निष्कर्ष पर पहुंचने की स्वतंत्रता होनी चाहिए थी। हरियाणा राज्य बनाम

भजन लाल [1992 Supp (1) SCC 335] में दर्शाए गए गम्भीर मामलों में ही इस तरह की जांच रोकना उचित होगा।"

34. जहां तक मध्यस्थता की कार्यवाही शुरू करने का संबंध है, आपराधिक कार्यवाही के साथ कोई संबंध नहीं है। इसके अलावा, उच्च न्यायालय ने द्वितीय प्रत्यर्थी के खिलाफ दायर आरोप-पत्र पर भी ध्यान नहीं दिया, जो इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए अभिलेख पर था कि जैसा कि कहा गया है कि कोई भी फौजदारी अपराध प्रथम दृष्टया बन रहा है और वास्तव में फौजदारी विचारण के दौरान इसकी सत्यता की जांच की जाए।

35. द्वितीय प्रत्यर्थी के लिए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री पी. चिदंबरम द्वारा सद्भाव दिखाते और हमें अभिलेख पर मौजूद प्रत्युत्तर हलफनामे के साथ संलग्न दस्तावेजी साक्ष्य दिखाते निवेदन, कि यह मूल रूप से एक दीवानी विवाद अथवा मध्यस्थता की कार्रवाई उत्पन्न करने वाला एक साधारण मामला था जो अनुबंध की शर्तों का पालन न करने के कारण हुए समाप्ति का परिणाम था, भा.दं.सं. की

धारा 406, 420, 34 के प्रावधानों को आकर्षित नहीं करेगा | इसे इस कारण से इस समय सही नहीं ठहराया जा सकता है क्योंकि द्वितीय प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान अधिवक्ता द्वारा जो सुझाव दिया गया है, वह विचारण के दौरान बचाव हो सकता है लेकिन उच्च न्यायालय के लिए विचारण हेतु यह उपलब्ध नहीं था कि वह इस पर न्यायिक संज्ञान ले व दं.प्र.सं. की धारा 482 के अंतर्गत अपनी अंतर्निहित शक्तियों के प्रयोग में आपराधिक कार्यवाहियों को रद्द करे |

36. जहाँ तक द्वितीय प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि यदि उच्च न्यायालय आरोप-पत्र और अभिलेख पर उपलब्ध अन्य तथ्यों पर विचार करने में विफल रहा है, तो मामले को पुन: विचार के लिए उच्च न्यायालय को विधि अनुसार वापस भेज दिया जाए। द्वितीय प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा जिस बात पर ज़ोर दिया जा रहा है, उसमें कुछ सार हो सकता है लेकिन इस कारण से कि हमारे सामने इस मामले पर

संक्षिप्त रूप से बहस की गई है, और पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं ने हमें आपराधिक कार्यवाही के अभिलेख से अवगत कराया है| अभिलेख का अध्ययन करने के बाद, हम संतुष्ट हैं कि अपराध में द्वितीय प्रत्यर्थी को जोड़ने के लिए आपराधिक कार्यवाही के अभिलेख से स्पष्ट रूप से पर्याप्त सामग्री उपलब्ध थी। नतीजतन, हम इस समय मामले को वापस भेजना उचित नहीं समझते हैं, क्योंकि यह व्यर्थ होगा; इसके विपरीत, इससे केवल कार्यवाही में देरी होगी, और आपराधिक मुकद्दमा रुक जाएगा, जिसे तेज़ी से आगे बढ़ाने की आवश्यकता है|

37. कार्यवाही के समापन के समय, दं.प्र.सं. की धारा 340 सहपठित धारा 195 के तहत प्रथम अपीलकर्ता के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही शुरू करने वाले द्वितीय प्रत्यर्थी के कहने पर अंतर्वर्ती आवेदन दायर किया गया है। हम पाते हैं कि ऐसे आवेदन परोक्ष कारणों से दायर किए जा रहे हैं जिनकी हम गंभीरता से निंदा करते हैं। तद्नुसार उक्त अंतर्वर्ती आवेदन को खारिज किया जाता है।

38. नतीजतन, अपील सिद्ध होती है और तदनुसार अनुमति प्रदान की जाती है। उच्च न्यायालय के दिनांक 15 मार्च, 2019 के आक्षेपित निर्णय को अपास्त किया जाता है। हम फिर भी यह स्पष्ट करते हैं कि हमारे द्वारा जो टिप्पणी की गई है वह केवल वर्तमान अपील के निपटान के उद्देश्य से है। विचारण न्यायलय इस फैसले में की गई टिप्पणियों से प्रभावित हुए बिना या हमारी राय को अभिव्यक्ति के रूप में लिए बिना शीघ्रता से विचारण को आगे बढ़ा सकता है।

39. सभी लंबित अंतरवर्ती आवेदनों का निपटान किया जाता है।

.....न्या.
(इंदु मल्होत्रा)

.....न्या.
(अजय रस्तोगी)

नई दिल्ली,
10 मार्च, 2021

अस्वीकरण: देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी|